[Conference- Innovation in Music & Dance :January,2015] ISSN- 2350-0530(O) 2394-3629(P)
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v3.i1SE.2015.3402

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

वर्तमान समयानुसार संगीत संस्थाओं के पाठ्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता

प्रो. किंशुक श्रीवास्तव
गंगा तमांग
संगीत विभाग, वनस्थली विद्यापीठ–304022

शिक्षा शब्द संस्कृत के 'शास' धातु से बना है जिसका अर्थ है शिक्षा देना, निर्देश देना, आज्ञा देना। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो ज्ञान विद्या अभ्यास व अनुभव से युक्त है जिसके माध्यम से योग्य या अयोग्य व्यक्ति की वृत्तियों का परिष्कार किया जा सकता है। वास्तव में शिक्षा का अर्थ है किसी विद्यार्थी के सीखने की क्रिया।
स्वामी विवेकानन्द का मत है ''मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है।
शिक्षा का अंग्रेजी अनुवाद Education है यह शब्द लैटिन भाषा से है, जिसका अर्थ है– विकसित करना अथवा निकालना।

''शिक्ष्यते उपदिश्यते यत्र सा शिक्षा''

अर्थात् जिस माध्यम अथवा प्रणाली के द्वारा उपदेश दिया जाता है वहीं शिक्षा है।

शिक्षा मानव के सर्वांगीण उन्नति का एक ऐसा आधार है जो बालक के व्यक्तित्व के विकास का कारण बनती है। बालक में अन्तर्निहित जन्मजात शक्तियों का परिष्कार करके उनमें दोषपूर्ण शक्तियों का निराकरण करके तथा आन्तरिक गुणों को निखार के शिक्षा ही बालक के व्यक्तित्व का निर्माण करती है।

संगीत शिक्षा :– प्राचीनकाल से ही भारतीय शिक्षा में संगीत एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। संगीत एक उत्कृष्ट एवं प्राचीनतम ललित कलाओं में से है, जिसे सभी ललित कलाओं में सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इसके अन्तर्गत कल्पना सूझ, सन्तुलन, स्वाभाविकता, आत्माभिव्यक्ति, आत्मनियंत्रण, गति व्यायाम तथा और भी अनेक गुण इस विषय में समाहित हैं। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि संगीत शिक्षण से शारीरिक बुद्धि का विकास, भावों का मार्गदर्शन, इच्छा का प्रशिक्षण, सहनशीलता का पाठ, प्रदर्शन की योग्यता, उद्देश्य प्राप्ति के लिए दृढ इच्छा का विकास होता है।

प्राचीनकाल में बिना किसी भेदभाव के पुत्र और शिष्य को एक समान शिक्षा प्रदान की जाती थी। कालान्तर में गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत शिक्षा प्रदान की जाने लगी। जिसमें शिष्य शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरूकुल में जाया करते थे। मध्यकाल में गुरू शिष्य परम्परा ने घरानों का रूप ले लिया था। घराने एक प्रकार से शिक्षण संस्थान ही थे, इन घरानों में प्रायः पुत्र और दामाद को तो सम्पूर्ण शिक्षा दी जाती थी, लेकिन सामान्य शिष्यों (जिसके साथ रक्त सम्बन्ध नहीं होता था) को कई बार शिक्षा की बारीकियों से वंचित रखा जाता था। फलतः संगीत की शिक्षा आम लोगों की पहुँच से दूर होने लगी।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक आते आते संगीत के क्षेत्र में नवीन चेतना की लहर जाग्रत हो गई। विष्णु दिगम्बर पलुस्कर तथा पं. विष्णु नारायण भातखण्डे जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप सम्पूर्ण उत्तर भारत में संगीत की शिक्षण संस्थाओं का जाल फैल गया। इन विद्वानों के प्रयासो फलस्वरूप ही संगीत विषय को एच्छिक रूप में पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। उस समय संगीत शिक्षा का स्तर काफी ऊँचा हुआ करता था।

आधुनिक समय में संगीत शिक्षा का स्तर निरन्तर गिरता ही जा रहा है, इसका मुख्य कारण संगीत की शिक्षा प्रणाली तथा पाठ्यक्रम है। मैं इस शोध पत्र में संस्थाओं में पाठ्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता पर ही चर्चा करूँगी।
संगीत शिक्षा के पाठ्यक्रम में बदलाव : – वर्तमान समय में संगीत शिक्षा के स्वरूप पर दृष्टि डाले तो हमारे समक्ष अनेक महत्वपूर्ण प्रश्न उजागर होते हैं जैसे –

- क्या हम शास्त्रीय संगीत के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों, जो हमारे समक्ष खुले है, की उचित जानकारी दे पा रहे हैं?
- क्या पाठ्यक्रम समाजशास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक आधार पर बनाया गया है?
- क्या शिक्षा के उद्देश्यों के ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य किया जा रहा है?
- क्या यह शिक्षा रोजगारोन्मुखी तथा जीविकोपार्जन की सुविधा दे पा रही है?

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

- क्या इस संगीत के द्वारा जो विद्यार्थी उपाधि प्राप्त कर निकले हैं, क्या हम उन सभी को अपनी व्यवस्था में ठीक से समायोजित कर पाए हैं?

इन सभी प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि यह सभी समस्या संगीत पाठ्यक्रम से उत्पन्न हुई है। हमारा संगीत शिक्षा का पाठ्यक्रम ही अधूरा तथा दिशाहीन है, जबकि पाठयक्रम का मूल अर्थ 'मार्ग पार करना' अथवा 'लक्ष्य तक पहुँचने के लिए दौड़ने का मार्ग' दूसरे शब्दों में पाठ्य का अर्थ है ''जो पढ़ाया जाने योग्य हो या जिसे पढ़ाया जा सके और क्रम का अर्थ है डग, पग, आरम्भ, तरकीब, सिलसिला, क्रम नियमित व्यवस्था।

अतः कहा जा सकता है कि किसी भी विषय को सुव्यवस्थित एवं नियमित रूप से सिखाने की व्यवस्था पाठ्यक्रम कहलाती है। पठनीय सामग्री का सुव्यवस्थित रूप पाठ्यक्रम कहलाता है।

अंग्रेजी में पाठ्यक्रम को Syllabus कहा जाता है। जिसमें किसी विषय की पढ़ाई जाने वाली सामग्री का क्रम निर्धारित किया जाता है। पाठ्यक्रम का निर्माण शिक्षा के सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होता है तथा पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व को विकसित करना तथा व्यवहार में परिवर्तन लाना है।

पाठ्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता क्यों?

संगीत विषय का शिक्षण स्तर सुधारने के लिए पाठ्यक्रम एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। विभिन्न संगीत संस्थाओं विद्यालयों के पाठ्यक्रम का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि वर्तमान पाठ्यक्रम रोजगारोन्मुखी नहीं है। वर्तमान में चल रहे सभी पाठ्यक्रम राग–शिक्षण तथा क्रियात्मक पक्ष पर अधिक बल देते है। किसी भी शैली विशेष में विद्यार्थियों की रूचि, स्वर ज्ञान, अभ्यास एवं शास्त्र पक्ष आदि पर इनमें ध्यान केन्द्रित नहीं किया जाता। वर्तमान समय में तो स्नातक स्तर पर पहले ही वर्ष में 8–10 रागों को सीखना पड़ता है जिसमें से कम से कम किसी भी राग में दो बड़े ख्याल तराना ,ध्रुपद, धमार तथा पाठ्यक्रम के सभी रागों में द्रुत ख्याल सीखना होता है।

संगीत एक प्रदर्शनकारी कला है अतः इस विषय का शिक्षण अन्य विषयों की तुलना में भिन्न होना चाहिए। संगीत एक ऐसा विषय है जिसमें अभ्यास तथा साधना की आवश्यकता होती है परन्तु आधुनिकता शिक्षा पद्धति पाठ्यक्रम, अभ्यास तथा साधना के अनुसार नहीं बनाया गया है। शिक्षण संस्थाओं में संगीत शिक्षण हेतु समयावधि 40–45 मिनट की ही है। इस निश्चित अवधि में 10–12 वर्षों का पाठ्यक्रम एक वर्ष में परीक्षा हेतु तैयार कराना होता है तथा पाठ्यक्रम में इतने कठिन राग निर्धारित किये गये है जिन्हें एक वर्ष की अवधि में सीखना सम्भव नहीं है क्योंकि एक राग का स्वरूप ही इतना विस्तृत होता है जिसे समझने में काफी समय लग जाता है। फलस्वरूप विद्यार्थियों को पाठ्यक्रम का कुछ हिस्सा ही परीक्षा हेतु तैयार करवा दिया जाता है और रागों में बंधे हुये आलाप तान करवा दिये जाते है। इसमें सृजनात्मकता का ह्रास होता है तथा अनुकरण पर बल दिया जाता है।

पाठ्यक्रम को शास्त्र तथा क्रियात्मक संगीत दो पक्षों में विभाजित किया गया है इसलिए अध्यापकों को दोनों पक्षों के लिए तैयार रहना पड़ता है। ऐसा करने से संगीत की गुणवत्ता में काफी कमी आती है।

संगीत शिक्षा में एक समस्या यह भी है कि विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम में एकरूपता नहीं है, पाठ्यक्रम को बहुत सोच,समझकर सुनिश्चित किया जाना चाहिए। वह कम ही क्यों न हो, पाठ्यक्रम में समानता न होने के कारण किसी विशेष विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् विद्यार्थी को अन्य विश्वविद्यालयों में अध्यापन करते समय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इन सभी कारणों तथा समस्याओं को देखते हुए संगीत के पाठ्यक्रम में कुछ ऐसे बदलाव किए जाने चाहिए जिससे छात्रों को लाभ हो तथा वह संगीत विषय के प्रति गम्भीर बनें।

सुझाव :– इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुये, संगीत के पाठ्यक्रम में बदलाव किये जा सकते है जिससे संगीत शिक्षा का स्तर उच्च स्तर पर आ जाये, यहाँ पर कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं। पाठ्यक्रम सुरूचिपूर्ण एवं लक्ष्य के अनुसार होना चाहिए। स्नातक स्तर पर एक आधारभूत पाठ्यक्रम चलाया जाना चाहिए क्योंकि स्नातर स्तर पर अधिकांश विद्यार्थी ऐसे होते हैं जो दसवी– बारहवी में संगीत विषय नहीं पढ़े होते हैं। ऐसे विद्यार्थियों के लिए स्वर एवं ताल के व्यवहारिक पक्ष

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

का अध्ययन कराने हेतु अलंकार, सरगम गीत, लक्षण गीत, तराना आदि का समावेश किया जाना चाहिए और साथ ही ताल ज्ञान एवं वाद्य ज्ञान से सम्बन्धित सामग्री को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

पाठ्यक्रम का निर्माण इस प्रकार से करना चाहिए कि स्नातक प्रथम वर्ष में स्वर ज्ञान, स्वराभ्यास, वाद्य मिलाने व उनके निर्माण सम्बन्धी जानकारी, संरचना एवं मरम्मत सम्बन्धी जानकारी आदि विषयों पर विशेष ध्यान दिया जाए, साथ ही दो रागों में द्रुत ख्याल का ज्ञान देना चाहिए। तत्पश्चात् द्वितीय एवं तृतीय वर्ष में पूर्ण पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की रूचि के अनुसार सुगम एवं लोक संगीत को सम्मिलित किया जाना चाहिए स्नातकोत्तर स्तर पर पाठ्यक्रम विद्यार्थियों की रूचि के अनुसार बनाना चाहिए। जिससे विद्यार्थी किसी एक शैली में निपुणता प्राप्त कर सके।

पाठ्यक्रम में रागों की संख्या के स्थान पर प्रस्तुतीकरण की गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम को मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय आधार पर भी बनाया जाना चाहिए क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए जीवन में विभिन्न क्रियाकलाप करता है। आकांक्षाओं की पूर्ति होती है तो संतोष प्राप्त होता है यदि नहीं पूर्ति होती तो कुंठाए उत्पन्न होती है। दूसरा समाजशास्त्रीय आधार है जैसे जैसे समाज की आवश्यकता में परिवर्तन आता है, पाठ्यक्रम में भी परिवर्तन आवश्यक हो जाता है। संगीत पाठ्यक्रम में सामाजिक परिवर्तन के साथ परिवर्तन होने के कारण संगीत विद्यार्थी निराशा तथा कुण्ठा का शिकार हो रहा है इसलिए मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय आधार पर ये भी मानवीय तथा सामाजिक आकांक्षाएँ, पाठ्यक्रम के निर्माण का प्रमुख आधार होनी चाहिए।

वर्तमान समय में संस्थाओं में संगीत शिक्षा के स्तर को रोजगारोन्मुखी बनाना एक ज्वलन्त आवश्यकता है। इसके लिए कुछ व्यवसायिक पाठयक्रम चलाए जाने चाहिए। जैसे संगीत रचनाकार व निर्देशक विडियों निर्माता, समीक्षात्मक अध्ययन, वाद्य निर्माता, मंच प्रदर्शक कलाकार संगीत शिक्षण, शास्त्रकार व रचनाकार, आयोजक, संगीत का रिकॉर्डिंग करना, रिकॉर्डस कम्पनियाँ, आकाशवाणी , दूरदर्शन के रूपक आदि में संगीत निर्माण।

संगीत के विविध आयाम है इसलिए संगीत की शिक्षा का स्वरूप निरन्तर बढ़ते हुए क्रम में होना चाहिए। जिससे विद्यार्थी भविष्य में इसे व्यवसायिक रूप में ग्रहण कर सके तथा अपनी शिक्षा को रोजगारोन्मुखी बना सके। जब पाठ्यक्रमों का संगीत में समावेश हो जायेगा तब संगीत शिक्षार्थी के सामने रोजगार के अवसर रहेंगे तथा जीविकोपार्जन की समस्या भी नहीं रहेगी इसलिए वर्तमान में संगीत संस्थाओं के स्तर को ऊँचा उठाने की अत्यधिक आवश्यकता है अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत शिक्षा के पाठ्यक्रम में थोड़ा बदलाव किया जाए तो संगीत शिक्षा का स्तर उच्च हो सकता है।

सन्दर्भ –

1 *हरीशचन्द्र श्रीवास्तव, संगीत निबन्ध संग्रह पृ.सं. 96*
2 *सारिका, संगीत, मई 2011, पृ.सं. 3*
3 *डॉ. हरदेव बाहरी – हिन्दी शब्दकोश*
4 *डॉ. पुष्पेन्द्र शर्मा, संगीत की उच्च स्तरीय शिक्षण प्रणाली एक समीक्षात्मक अध्ययन (हरियाणा प्रदेश), पृ.सं. 95*